

श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित अहिंसक युद्ध

Dr. Dilip Kumar Das,

Classical Teacher, Town Government Girls High School, Bhawanipatna,
Kalahandi, Odisha, India

सारांश-

भारतीय दार्शनिक परम्परा में व्यासदेव विरचित महाभारत के अन्तर्गत श्रीमद्भगवद्गीता एक लघु अंश होते हुए भी अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसमें ज्ञान, कर्म, भक्ति तथा उपासना-योग के माध्यम से आध्यात्मिक जीवन के गूढ़ सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। सामान्यतः गीता को महाभारत के कुरुक्षेत्र में सम्पन्न ऐतिहासिक युद्ध की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया गया ग्रन्थ माना जाता है। तथापि गीता में वर्णित युद्ध का अर्थ केवल बाह्य या भौतिक संघर्ष तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें गहन दार्शनिक संकेत भी निहित हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में भगवद्गीता के आधार पर 'अहिंसक युद्ध' की अवधारणा का विश्लेषण किया गया है। विशेषतः दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों के मध्य होने वाले आन्तरिक संघर्ष को गीता के युद्ध का वास्तविक स्वरूप मानने का प्रयास किया गया है। महात्मा गान्धी तथा स्वामी अङ्गड़ानन्द जैसे चिन्तकों की व्याख्याओं के आलोक में यह प्रतिपादित किया गया है कि गीता का युद्ध मानव के अन्तःकरण में स्थित दैवी एवं आसुरी शक्तियों के मध्य होने वाला संघर्ष है।

मुख्यशब्द: भगवद्गीता, भीष्मपर्व, अहिंसक युद्ध, दैवी सम्पद, आसुरी सम्पद, आत्मसंघर्ष।

भूमिका

भगवद्गीता महाभारत के भीष्मपर्व के अध्याय 25-42 में स्थित लगभग सात सौ श्लोकों का एक महत्वपूर्ण अंश है। सामान्यतः महाभारत को एक ऐतिहासिक ग्रन्थ के रूप में देखा जाता है, किन्तु कुछ विद्वान महाभारत के युद्ध को प्रतीकात्मक अथवा दार्शनिक आख्यान भी मानते हैं। महाभारत के अनुसार कौरवों की ग्यारह तथा पाण्डवों की सात अक्षौहिणी सेनाएँ कुरुक्षेत्र में एकत्रित हुई थीं¹। इस युद्ध के परिणामस्वरूप दोनों पक्षों की अधिकांश सेनाएँ नष्ट हो गयीं और अन्ततः पाण्डवों को विजय प्राप्त हुई। युद्ध के उपरान्त धृतराष्ट्र भी इस महाविनाश को स्मरण करते हुए गहन शोक व्यक्त करते हैं। यद्यपि इस युद्ध का वर्णन अत्यन्त

¹ प्राचीन चरित्र कोश, पृष्ठा-703

भयानक रूप में मिलता है, तथापि अनेक दार्शनिकों ने भगवद्गीता के सन्दर्भ में इस युद्ध को केवल बाह्य या भौतिक युद्ध न मानकर मानव के अन्तःकरण में स्थित दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों के मध्य होने वाले आन्तरिक संघर्ष का प्रतीक माना है। इसी सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों ने गीता के युद्ध की भिन्न-भिन्न व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं। उदाहरणार्थ, लोकमान्य तिलक ने *गीता रहस्य* में इसे कर्मयोग का उपदेश माना है, जबकि महात्मा गान्धी तथा स्वामी अङ्गड़ानन्द ने इसे मानव के भीतर दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों के मध्य होने वाले आन्तरिक अथवा नैतिक संघर्ष के रूप में व्याख्यायित किया है।

गीता में युद्ध की अवधारणा-

गीता के अनेक स्थानों पर भगवान् श्रीकृष्ण ने 'युद्ध' शब्द का प्रयोग किया है। विशेषतः द्वितीय अध्याय में अर्जुन के विषाद को दूर करते हुए श्रीकृष्ण उन्हें अपने स्वधर्म का पालन करने तथा धर्मयुद्ध के लिए प्रेरित करते हैं। इस सन्दर्भ में श्रीकृष्ण कहते हैं-

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।
धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते॥
यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम्॥
अथ चैत्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥
अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम्।
संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते॥
भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।
येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम्॥
अवाच्यवादांश्च बहून् वदिष्यन्ति तवाहिताः।
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम्॥
हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्॥
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः॥
सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि²॥

² श्रीमद्भगवद्गीता(यथार्थगीता)- 2/31-38

अर्थात् हे अर्जुन! अपने स्वधर्म का विचार करके तुम्हें विचलित नहीं होना चाहिए, क्योंकि क्षत्रिय साधक के लिए धर्मयुक्त युद्ध से बढ़कर कोई अन्य कल्याणकारी मार्ग नहीं है। ऐसा युद्ध साधक को स्वभावतः प्राप्त होता है और वही उसके लिए स्वर्ग के खुले द्वार के समान है। यदि तुम इस धर्मयुक्त संघर्ष को नहीं करोगे, तो अपने स्वधर्म और कीर्ति को खोकर पाप के भागी बनोगे। लोग तुम्हारी निन्दा करेंगे और सम्मानित पुरुष के लिए अपयश मृत्यु से भी अधिक दुःखद होता है। जिन महारथियों के बीच तुम्हारा सम्मान है, वे यह समझेंगे कि तुम भय के कारण इस संघर्ष से पीछे हट गए हो और इस प्रकार तुम्हारा मान घट जाएगा। तुम्हारे विरोधी तुम्हारी सामर्थ्य की निन्दा करते हुए अनेक अपमानजनक वचन कहेंगे। यदि साधक इस संघर्ष में शरीर छोड़ देता है, तो वह स्वर्ग अर्थात् देवत्व की अवस्था को प्राप्त करता है और यदि इस संघर्ष में विजय प्राप्त करता है, तो परम स्थिति अर्थात् परमात्मा की प्राप्ति करता है। इसलिए हे कौन्तेय! सुख-दुःख, लाभ-हानि तथा जय-पराजय को समान मानकर दृढ़ निश्चय के साथ इस आध्यात्मिक संघर्ष में प्रवृत्त हो जाओ। इस प्रकार कर्म करने से साधक पाप अर्थात् जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त हो जाता है। महात्मा गान्धी, स्वामी अङ्गद्वानन्द तथा पण्डित श्रीराम शर्मा आचार्य आदि के मतानुसार गीता में वर्णित युद्ध मनुष्य के अन्तःकरण में स्थित दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों के मध्य होने वाला आध्यात्मिक संघर्ष है। उनके अनुसार कुरुक्षेत्र भौतिक युद्धभूमि के साथ-साथ मानव का शरीर ही वास्तविक 'क्षेत्र' है। गीता के त्रयोदश अध्याय में कहा गया है-

**इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः³॥**

अर्थात् यह शरीर ही 'क्षेत्र' है और जो इसे जानता है वही 'क्षेत्रज्ञ' कहलाता है। इससे स्पष्ट होता है कि भगवद्गीता में मनुष्य का शरीर 'क्षेत्र' तथा उसे जानने वाला आत्मतत्त्व 'क्षेत्रज्ञ' कहा गया है। इसी 'क्षेत्र' अर्थात् मानव के अन्तःकरण में दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों के मध्य होने वाला संघर्ष ही वास्तविक युद्ध है। इसी सन्दर्भ में गीता में कहा गया है-

**दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता।
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव⁴॥**

अर्थात् दैवी सम्पदा मोक्ष की ओर ले जाती है, जबकि आसुरी सम्पदा बन्धन का कारण बनती है।

³ श्रीमद्भगवद्गीता 13/2

⁴ श्रीमद्भगवद्गीता 16/5

दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों का स्वरूप-

भगवद्गीता के षोडश अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों का विस्तृत विवेचन करते हैं। इन प्रवृत्तियों के आधार पर मनुष्य के नैतिक स्वरूप का निर्धारण होता है। दैवी गुणों के विकास से मनुष्य उन्नति की ओर अग्रसर होता है और अन्ततः मोक्ष की प्राप्ति करता है। इस सन्दर्भ में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं-

**अभयं सत्त्वसंशुद्धिः ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत⁵ ॥**

अर्थात् अभय, अन्तःकरण की शुद्धता, तत्त्वज्ञान का अनुशीलन, दान, इन्द्रियों का दमन, यज्ञ का आचरण, स्वाध्याय, तपस्या, सरलता, अहिंसा, आत्मा परमात्मा की सत्यता, क्रोध का न होना, त्याग, शान्ति, अपैशून्य, दया, लोभविहीनता, कोमलता, लज्जा, सङ्कल्प, तेज, क्षमा, धैर्य, धृति, शौच, पवित्रता, किसी के प्रति शत्रुभाव न होना, अपने में पुज्यता के भाव का सर्वथा अभाव होना। इसप्रकार गीता में प्राप्त 26 लक्षण दिव्यगुण सम्पन्न दैवी पुरुषों में मिलता है। इसके बाद भगवान श्रीकृष्ण आसुरी प्रवृत्तियों का भी उल्लेख करते हैं। गीता के अनुसार दम्भ, दर्प, अभिमान, क्रोध, कठोर वाणी तथा अज्ञान आदि आसुरी प्रवृत्ति के लक्षण हैं⁶। ऐसे व्यक्ति प्रवृत्ति और निवृत्ति के मार्ग का भेद नहीं जानते तथा उनमें शुद्ध-अशुद्ध और सत्य-असत्य का भी विवेक नहीं होता। आसुरी प्रवृत्ति से युक्त व्यक्ति प्रवृत्ति और निवृत्ति के मार्ग में अन्तर नहीं समझ पाता और उसमें शुद्ध-अशुद्ध अथवा सत्य-असत्य का भी ज्ञान नहीं रहता⁷। इसके बाद भगवान श्रीकृष्ण आसुरी प्रवृत्तियों का और भी विस्तार से वर्णन करते हैं कि यह जगत् मिथ्या और भित्तिहीन है तथा इसका कोई नियन्ता नहीं है। उनकी बुद्धि मन्द होती है। ऐसे व्यक्ति अपने दुष्ट विचारों को दृढ़ता से पकड़े रहते हैं और उनकी समस्त प्रवृत्तियाँ जगत् के नाश की ओर प्रवृत्त होती हैं। उनकी कामनाएँ अनन्त होती हैं। वे दम्भ, मान और अहंकार से युक्त रहते हैं। इस कारण वे आसुरी प्रवृत्ति वाले लोग असंख्य चिन्ताओं का आश्रय लेकर विषयभोगों में तत्पर रहते हैं और सैकड़ों आशापाशों से बँधे हुए काम और क्रोध के परायण होकर विषयभोग के लिए अन्यायपूर्वक बहुत धनादि संचय करने का प्रयत्न करते हैं। वे सोचते हैं- “मुझे आज यह प्राप्त हुआ है, कल उस मनोरथ को भी प्राप्त कर लूँगा। इस शत्रु को आज मैंने मार डाला है और अन्य शत्रुओं को भी मैं मारूँगा। मैं ईश्वर हूँ, सिद्ध हूँ, बलवान हूँ, उपभोग करने वाला और सुखी हूँ। मैं सम्पन्न

⁵ श्रीमद्भगवद्गीता 16/1-3

⁶ श्रीमद्भगवद्गीता 16/4

⁷ श्रीमद्भगवद्गीता 16/7

हूँ और बड़े कुटुम्ब वाला हूँ; मेरे समान दूसरा कौन है? मैं कीर्ति प्राप्त करने के लिए यज्ञ करूँगा, दान करूँगा और आमोद-प्रमोद करूँगा।” इस प्रकार अनेक प्रकार के अज्ञान से मोहित होकर तथा मोह रूपी जाल में फँसकर विषयभोगों में आसक्त लोग अन्ततः अपवित्र नरक में वास करते हैं⁸। काम, क्रोध तथा लोभ- ये तीन प्रकार के नरक के द्वार हैं और आत्मा का नाश करने वाले हैं। अतः इन तीनों का त्याग कर देना चाहिए। इन तीनों नरक के द्वारों का त्याग करने वाला पुरुष कल्याणकारी आचरण करता है और वह परमगति अर्थात् परमात्मा को प्राप्त हो जाता है। जो पुरुष शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा के अनुसार, जो मन में आए वैसा आचरण करते हुए भोगों में लिप्त रहते हैं, उन्हें न सिद्धि प्राप्त होती है, न परमगति और न ही सुख। इसलिए आसुरी सम्पदा से युक्त व्यक्तियों को कर्तव्य और अकर्तव्य का निर्णय करने के लिए शास्त्र को ही प्रमाण मानना चाहिए। अतः शास्त्र में जो कुछ कहा गया है, उसे जानकर उसके अनुसार इस लोक में नियत कर्म करना ही उचित है⁹। इस प्रकार भगवद्गीता के अनुसार दैवी और आसुरी प्रवृत्तियाँ मनुष्य के अन्तःकरण में उपस्थित दो परस्पर विरोधी शक्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। दैवी प्रवृत्तियों का विकास मनुष्य को मोक्ष और आध्यात्मिक उन्नति की ओर ले जाता है, जबकि आसुरी प्रवृत्तियाँ उसे बन्धन, दुःख और पतन की ओर अग्रसर करती हैं। अतः मनुष्य के लिए आवश्यक है कि वह दैवी गुणों का विकास करे और आसुरी प्रवृत्तियों का परित्याग करे।

निष्कर्ष-

उपर्युक्त चर्चा से स्पष्ट होता है कि भगवद्गीता का युद्ध दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों के मध्य होने वाले आन्तरिक संघर्ष का प्रतीक है। यद्यपि इसकी पृष्ठभूमि महाभारत के कुरुक्षेत्र के युद्ध से सम्बद्ध है, तथापि इसके दार्शनिक अर्थों से ज्ञात होता है कि गीता का वास्तविक आशय मनुष्य के अन्तःकरण में होने वाले आध्यात्मिक संघर्ष से है। जब मनुष्य अपने भीतर स्थित काम, क्रोध, लोभ और अहंकार जैसी आसुरी प्रवृत्तियों का त्याग कर दैवी गुणों का विकास करता है, तब वह वास्तविक विजय प्राप्त करता है। अतः गीता का यह युद्ध आत्मसंयम, आत्मशुद्धि तथा आत्मविकास की दिशा में अग्रसर करने वाला एक गहन आध्यात्मिक साधन है, जो मनुष्य को नैतिक उन्नति और परम लक्ष्य की प्राप्ति की ओर प्रेरित करता है।

⁸ श्रीमद्भगवद्गीता 16/9-17

⁹ श्रीमद्भगवद्गीता 16/21-24

सन्दर्भग्रन्थसूची-

1. अङ्गडानन्दजी, स्वामी श्री. *यथार्थ गीता* (हिन्दी). मुम्बई: श्री परमहंस स्वामी अङ्गडानन्दजी आश्रम ट्रस्ट, 2017.
2. चित्राव, सिद्धेश्वर शास्त्री. *भारतवर्षीय प्राचीन चरित्र कोश*. पुणे: भारतीय चरित्र कोश मण्डल, 1964.
3. गान्धी, महात्मा. *श्रीमद्भगवद्गीता अर्थात् अनासक्ति योग: गीता-बोध सहित*. दिल्ली: भारतीय प्रकाशन मण्डल, 1948.
4. तिलक, लोकमान् बाल गंगाधर . *श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य अथवा कर्मयोग शास्त्र*. पुणे: केसरी प्रकाशन, 1915.
5. *अक्षौहिणी*. भारत डिस्कवरी (भारतकोश). उपलब्ध: <https://bharatdiscovery.org/india/अक्षौहिणी> (अभिगमन तिथि: 1 मार्च 2025).
6. *श्रीमद्भगवद्गीता*. गीता सुपरसाइट, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर. उपलब्ध: <https://www.gitasupersite.iitk.ac.in> (अभिगमन तिथि: 10 मार्च 2025).
7. *कुरुक्षेत्र युद्ध*. Wisdom Library. उपलब्ध: <https://www.wisdomlib.org/concept/kurukshetra-war> (अभिगमन तिथि: 29 मार्च 2025).